Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग (MPPSC)

भारतीय राजनीति, संविधान एवं प्रशासनिक संरचना

(मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ सहित)

भाग–1

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: MPPM04

मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग (MPPSC)

भारतीय राजनीति, संविधान एवं प्रशासनिक संरचना

(मध्य प्रदेश के विशेष संदर्भ सहित)

भाग–1

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली–110009
दूरभाष : 8750187501, 011-47532596
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

MPPCS DLP विषय सूची (Contents)

1.	**राजव्यवस्था का परिचय**	**5-13**
1.1	राज्य, राज्य के तत्त्व	5
1.2	प्रमुख शासन प्रणालियाँ	5
1.3	लोकतंत्र एवं उसके प्रकार	9
2.	**संविधान : एक संक्षिप्त परिचय**	**14-33**
2.1	संविधान सभा और संविधान निर्माण समिति	14
2.2	संविधान की प्रमुख विशेषताएँ	18
2.3	संविधान के महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद	21
2.4	संविधान की अनुसूचियाँ	24
2.5	संविधान के विभिन्न भाग तथा विषय	26
2.6	भारतीय संविधान की अन्य देशों के संविधानों से तुलना	27
3.	**संविधान की प्रस्तावना**	**34-38**
3.1	प्रस्तावना की विषयवस्तु	34
3.2	प्रस्तावना की उपयोगिता	34
4.	**संघ और उसका राज्य क्षेत्र**	**39-47**
4.1	संघ और उसके राज्यक्षेत्र से संबंधित महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद	39
4.2	राज्यों का पुनर्गठन	40
5.	**नागरिकता संबंधी उपबंध**	**48-56**
6.	**मूल अधिकार**	**57-71**
6.1	मूल अधिकार की पृष्ठभूमि	57
6.2	समता का अधिकार	59
6.3	स्वतंत्रता का अधिकार	61
6.4	शोषण के विरुद्ध अधिकार	64
6.5	धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार	64
6.6	संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार	65
6.7	संवैधानिक उपचारों का अधिकार	66

7. राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांत **72-78**

7.1 नीति-निदेशक तत्त्वों का इतिहास 72

7.2 मूल अधिकारों और नीति-निदेशक तत्त्वों में अंतर 76

8. मूल कर्तव्य **79-83**

9. संघ की कार्यपालिका **84-110**

9.1 राष्ट्रपति 84

9.2 भारत का उपराष्ट्रपति 96

9.3 भारत का प्रधानमंत्री 99

9.4 केंद्रीय मंत्रिपरिषद 103

9.5 भारत का महान्यायवादी 106

10. राज्य की कार्यपालिका **111-129**

10.1 राज्यपाल 111

10.2 मुख्यमंत्री 121

10.3 मंत्रिपरिषद 123

10.4 महाधिवक्ता 125

11. संघ की विधायिका **130-157**

11.1 संसद का गठन 130

11.2 संसद में विधि निर्माण प्रक्रिया 141

11.3 बजट संबंधी प्रक्रिया 145

11.4 संसद में कामकाज 149

11.5 लोकसभा व राज्यसभा की तुलना 153

12. राज्य विधायिका **158-169**

12.1 विधानपरिषद 158

12.2 विधानसभा 160

12.3 विधि निर्माण 163

13. न्यायपालिका **170-208**

13.1 सर्वोच्च न्यायालय 171

13.2 उच्च न्यायालय 183

13.3 ज़िला एवं अधीनस्थ न्यायालय 193

13.4 लोक अदालत एवं ग्राम न्यायालय 196

13.5 न्यायिक सक्रियता और जनहित याचिका 200

13.6 न्यायपालिका की अवमानना 204

अध्याय
1

राजव्यवस्था का परिचय (Introduction of Polity)

1.1 राज्य, राज्य के तत्त्व *(State, Elements of State)*

मानव सभ्यता के विकास का इतिहास राज्य के अस्तित्त्व के साथ जुड़ा है। कालांतर में इसके रूप में बदलाव में आता रहा और यह एक सर्वव्यापी संस्था बन गयी है।

राज्य राज्यव्यवस्था से जुड़ी प्राथमिक एवं अमूर्त अवधारणा है। यूँ तो 'राज्य' शब्द का प्रयोग विभिन्न प्रांतों, जैसे- मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ आदि को सूचित करने के लिये होता है परंतु उसका वास्तविक अर्थ समाज की 'राजनीतिक संरचना' से होता है। उदाहरणार्थ भारत सरकार, राज्य सरकारें, न्यायपालिका, विधायिका, नौकरशाही से जुड़े अधिकारी आदि की समग्र संरचना ही 'राज्य' कहलाता है।

किसी भी 'राज्य' में चार तत्त्व अनिवार्य रूप से विद्यमान होते हैं–**भू-भाग, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता।** इनमें से किसी भी तत्त्व का अभाव होने पर 'राज्य' की अवधारणा निरर्थक हो जाएगी। राज्य के लिये एक निश्चित **भू-भाग** का होना अतिआवश्यक है। राज्य के पास एक निश्चित भूमि होनी चाहिये। **जनसंख्या** के बिना एक राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती राज्य की स्थापना में जनसंख्या एक महत्त्वपूर्ण मानवतत्त्व है।

सरकार नामक तत्त्व का जहाँ तक प्रश्न है तो यह राज्य की व्यावहारिक एवं मूर्त अभिव्यक्ति है। **संप्रभुता** राज्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।

1.2 प्रमुख शासन प्रणालियाँ *(Major Governance Systems)*

सामान्यत: विभिन्न देशों की शासन प्रणालियों में अंतर उनकी सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक एवं राजनीतिक पृष्ठभूमि के कारण होता है। विश्व की प्रमुख शासन प्रणालियों का वर्गीकरण निम्नलिखित आधार पर किया जा सकता है-

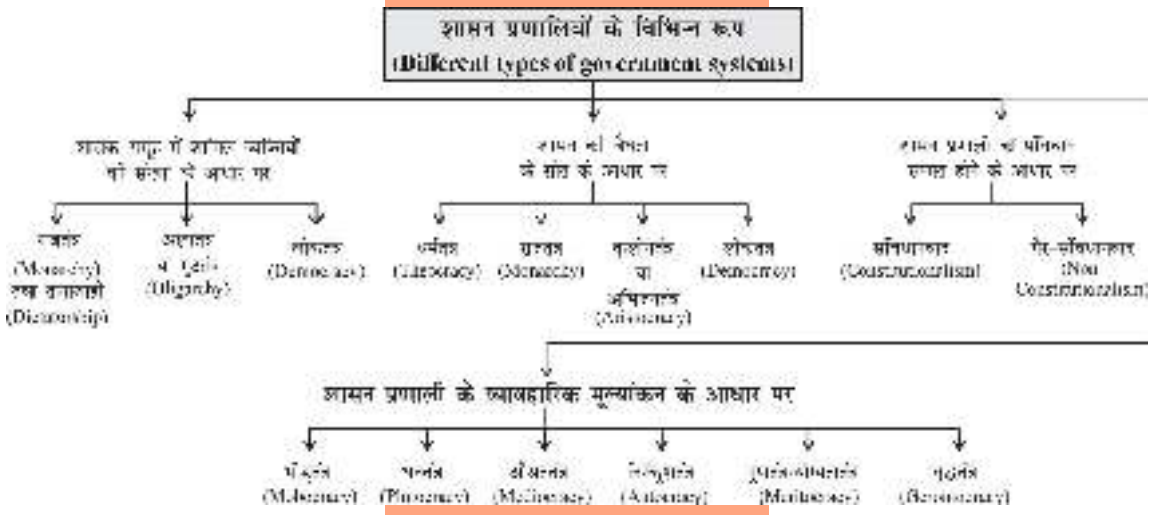

यहाँ एक विचारणीय प्रश्न यह है कि भारतीय राज्यव्यवस्था शासन की इन विभिन्न प्रणालियों में से किसके नज़दीक है? इसे निम्न प्रकार से समझा जा सकता है-

- सैद्धांतिक तौर पर भारत में **लोकतंत्र** है परंतु अधिकांश जनता के जागरूक न होने और गरीब होने के कारण सत्ता की प्रतिस्पर्द्धा सामान्यत: दो-तीन छोटे-छोटे गुटों के बीच होती है, अत: कुछ लोग इसे **अल्पतंत्र या गुटतंत्र** कहते हैं।

सबका साथ सबका विकास की अवधारणा के साथ भारतीय राष्ट्रवाद और राजनीति की इसकी अवधारणा में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एक प्रमुख तत्त्व है।

- **कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (सी.पी.आई.):** इस दल की स्थापना 1925 में हुई। इस पार्टी की विचारधारा मार्क्सवाद-लेनिनवाद, धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र में आस्था और अलगाववाद एवं सांप्रदायिकतों के विरोध पर आधारित है। यह पार्टी संसदीय लोकतंत्र को मज़दूरों, किसानों और गरीबों के हितों को आगे बढ़ाने का एक उपकरण मानती है।
- **कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया-मार्क्सिस्ट (सी.पी.आई.एम.):** 1964 में स्थापित इस दल की मज़बूत आस्था मार्क्सवादी व लेनिनवादी विचारधारा में है। यह समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता एवं लोकतंत्र की समर्थक व साम्राज्यवाद एवं सांप्रदायिकता की विरोधी है। यह पार्टी भारत में सामाजिक-आर्थिक न्याय का लक्ष्य साधने में लोकतांत्रिक चुनावों को सहायक और उपयोगी मानती है।
- **भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस:** इसे आमतौर पर कॉन्ग्रेस पार्टी कहा जाता है और यह दुनिया के सबसे पुराने दलों में से एक है। 1885 में इस दल का गठन हुआ। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरोध की बुनियाद पर इस पार्टी का गठन हुआ था। इस दल ने भारत को एक आधुनिक धर्मनिरपेक्ष एवं लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने का प्रयास किया। न्याय, स्वतंत्रता, समानता इसके प्रमुख सिद्धांत रहे हैं।
- **राष्ट्रवादी कॉन्ग्रेस पार्टी:** 1990 में इस पार्टी की स्थापना हुई। इस दल की लोकतंत्र, गांधीवादी धर्मनिरपेक्षता, समता, सामाजिक न्याय और संघवाद में आस्था है।
- **नेशनल पीपुल्स पार्टी:** नेशनल पीपुल्स पार्टी की स्थापना पी.ए. संगमा द्वारा 2012 में की गई थी। जून, 2019 में भारत निर्वाचन आयोग द्वारा इसे राष्ट्रीय पार्टी का दर्जा दिया गया। यह पार्टी मुख्य रूप से उत्तर-पूर्वी राज्यों हेतु के लोगों एवं उनके हितों के लिये कार्य करती है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- राजव्यवस्था से जुड़ी प्राथमिक एवं अमूर्त अवधारणा 'राज्य' का संबंध किसी समाज की राजनीतिक संरचना से है।
- भू-भाग, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता राज्य के चार अनिवार्य तत्त्व हैं।
- सरकार 'राज्य' की मूर्त एवं व्यावहारिक अभिव्यक्ति है।
- संप्रभुता राज्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।
- राष्ट्र विरोधी ताकतों से निपटने, आतंरिक सुरक्षा की चुनौतियों से निपटने, समाज के वंचित वर्ग को मुख्यधारा से जोड़ने, विभिन्न हित समूहों के मध्य आपसी सामंजस्य स्थापित करने आदि के कारण भारत को राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता है।
- भारतीय शासन प्रणाली सामान्यत: संघात्मक है जो संकट के समय एकात्मक रूप धारण कर लेती है।
- भारत ने संसदीय शासन प्रणाली को अपनाया है जिसमें राज्याध्यक्ष 'राष्ट्रपति' ब्रिटेन के सम्राट की तरह नाममात्र का प्रधान है।
- दबाव समूह, मीडिया में व्याप्त भ्रष्टाचार, रूढ़िवादी संस्कार, गरीबी, निरक्षरता, अंधविश्वास, अधिकारीतंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार, तीव्र सामाजिक परिवर्तन आदि भारतीय संविधान के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ हैं।
- कई आंदोलनों द्वारा भारतीय लोकतंत्र में 'वापस बुलाने का अधिकार' (Right to recall), खारिज करने का अधिकार (right to reject) आदि जैसी प्रत्यक्ष लोकतंत्र की विशेषताओं को शामिल करने की मांग होती रहती है।
- निजीकरण और उदारीकरण की नीतियाँ भारतीय लोकतंत्र को समाजवादी लोकतंत्र के मुकाबले उदारवादी लोकतंत्र के ज़्यादा नज़दीक बनाती हैं।
- क्षेत्रीय, भाषायी, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि विविधताओं को देखते हुए भारतीय संविधान निर्माताओं ने बहुदलीय प्रणाली को अपनाया।
- भारतीय बहुदलीय प्रणाली वर्तमान समय में 'द्वि-गठबंधनात्मक व्यवस्था' की ओर बढ़ रही है, न कि 'द्विदलीय व्यवस्था' की ओर।
- स्विट्ज़रलैंड की राजनीतिक प्रणाली में पहल (Initiative), जनमत संग्रह या परिपृच्छा (Referendum) की विशेषता प्रत्यक्ष लोकतंत्र के तत्त्व हैं।

- परिसंघात्मक प्रणाली को 'अविनाशी राज्यों का विनाशी संगठन' कहा जाता है।
- संघात्मक व्यवस्था को 'अविनाशी राज्यों का अविनाशी संगठन' कहा जाता है।
- एकात्मक व्यवस्था को 'विनाशी राज्यों का अविनाशी संगठन' कहा जाता है।
- अध्यक्षीय या शासन की राष्ट्रपति प्रणाली में स्थायित्व, त्वरित निर्णय की क्षमता, विशेषज्ञों की भूमिका जैसे गुण होते हैं।
- संसदीय या प्रधानमंत्रीय प्रणाली में उत्तरदायित्व का निर्धारण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व होता है क्योंकि सरकार को संसद में अपने कार्यों का औचित्य बताना पड़ता है और सदस्यों के प्रश्नों के उत्तर देने पड़ते हैं।
- **तिब्बत और वेटिकन सिटी** की शासन प्रणालियों को **धर्मतंत्र** के वर्ग में रखा जा सकता है।
- संविधानवादी शासन को 'विधि का शासन' कहा जाता है।
- विधायिका में से कार्यपालिका नियुक्त होने के कारण संसदीय प्रणाली में शक्तियों का पृथक्करण एवं नियंत्रण और संतुलन उतना सुदृढ़ नहीं होता जितना कि अध्यक्षीय प्रणाली में।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. राज्य के लिये अनिवार्य तत्त्व है/हैं-
   (a) भू-भाग
   (b) संप्रभुता
   (c) सरकार
   (d) जनसंख्या के साथ-साथ उपरोक्त तीनों
2. राज्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है-
   (a) भू-भाग (b) सरकार
   (c) जनसंख्या (d) संप्रभुता
3. निम्न कथनों पर विचार कीजिये-
   1. सरकार राज्य की व्यावहारिक अभिव्यक्ति है।
   2. राज्य से अभिप्राय किसी समाज की राजनीतिक संरचना से है।
   3. राज्य एक मूर्त धारणा है।

   उपरोक्त कथनों में से कौन-सा/से सत्य है/हैं?
   (a) 1 और 2 (b) 2 और 3
   (c) 1 और 3 (d) 1, 2 और 3
4. कौन-सी व्यवस्था 'अविनाशी राज्यों का अविनाशी संगठन' कही जाती है?
   (a) परिसंघात्मक व्यवस्था
   (b) एकात्मक व्यवस्था
   (c) संघात्मक व्यवस्था
   (d) इनमें से कोई नहीं
5. 'अविनाशी राज्यों का विनाशी संगठन' कही जाने वाली व्यवस्था है-
   (a) परिसंघात्मक व्यवस्था
   (b) संघात्मक व्यवस्था
   (c) एकात्मक व्यवस्था
   (d) इनमें से कोई नहीं
6. वह राजनीतिक प्रणाली जिसमें प्रांतों या कार्यकारी इकाइयों का निर्माण संघ की इच्छा पर निर्भर है-
   (a) संघात्मक व्यवस्था
   (b) परिसंघात्मक व्यवस्था
   (c) एकात्मक व्यवस्था
   (d) उपरोक्त सभी
7. निम्न में से कौन-सी प्रत्यक्ष लोकतंत्र की विशेषताएँ हैं?
   (a) पहल
   (b) जनमत संग्रह
   (c) वापस बुलाने का अधिकार
   (d) उपरोक्त सभी
8. निम्न में से कौन-सा अध्यक्षीय प्रणाली का गुण नहीं है?
   (a) विशेषज्ञों की भूमिका
   (b) शक्ति पृथक्करण तथा नियंत्रण व संतुलन का प्रभावी ढंग से पाया जाना
   (c) त्वरित निर्णय की क्षमता
   (d) दैनिक उत्तरदायित्व
9. निम्न में से कौन-सा संसदीय प्रणाली का गुण नहीं है?
   (a) कार्यपालिका का निर्माण विधायिका में से होता है।
   (b) कार्यकाल की निश्चितता नहीं है अर्थात् स्थायित्व नहीं होता।
   (c) शक्तियों का सुस्पष्ट पृथक्करण नहीं होता।
   (d) राष्ट्रपति वास्तविक राष्ट्राध्यक्ष होता है।
10. धर्म तंत्र का उदाहरण है/हैं-
    (a) तिब्बत
    (b) वेटिकन सिटी
    (c) (a) और (b) दोनों
    (d) न तो (a) और न ही (b)

उत्तरमाला

1. (d) 2. (d) 3. (a) 4. (c) 5. (a) 6. (c) 7. (d) 8. (d) 9. (d) 10. (c)

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर 10-20 शब्दों/एक-दो पंक्तियों में दीजिये)

1. राज्य क्या है?
2. राज्य के आवश्यक तत्त्व
3. लोकतंत्र
4. संविधानवाद
5. संसदीय प्रणाली
6. एकदलीय लोकतंत्र

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर 50 शब्दों या 5 से 6 पंक्तियों में दीजिये)

1. बहुदलीय लोकतंत्र
2. द्वि-गठबंधनीय व्यवस्था
3. संघात्मक प्रणाली
4. एकात्मक प्रणाली

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100/200/300 शब्दों में दीजिये)

1. भारत में संसदीय लोकतंत्र को सुदृढ़ करने हेतु कौन-कौन सी आवश्यक शर्तें हैं? स्पष्ट कीजिये। **(100 शब्द) M.P.P.C.S. (Mains) 2018**
2. भारत के कोई दो प्रमुख राजनीतिक दलों की विचारधारा और कार्यक्रम बताइये। **(100 शब्द) M.P.P.C.S. (Mains) 2018**
3. ''क्या शनैः-शनैः भारत द्विदलीय प्रणाली की ओर बढ़ रहा है?'' **(100 शब्द) M.P.P.C.S. (Mains) 2014**
4. संसदीय और अध्यक्षात्मक शासन प्रणालियों की तुलना करें। इनमें से कौन-सी ज़्यादा बेहतरीन है? अपने उत्तर के पक्ष में प्रमाण दें।
5. भारतीय राजव्यवस्था में आपको कौन-कौन-सी शासन प्रणालियाँ दिखाई पड़ती हैं?
6. लोकतंत्र से आप क्या समझते हैं? जनता और शासन संपर्क के आधार पर लोकतंत्र के प्रकारों की विवेचना करें।
7. ''भारतीय शासन प्रणाली संघात्मक है या एकात्मक?'' समीक्षा कीजिये।

अध्याय
2

संविधान : एक संक्षिप्त परिचय
(Constitution : A Brief Introduction)

संविधान नियमों-उपनियमों का एक ऐसा लिखित दस्तावेज़ होता है, जिसके अनुसार सरकार का संचालन किया जाता है। यह देश की राजनीतिक व्यवस्था का बुनियादी ढाँचा निर्धारित करता है। संविधान राज्य की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की स्थापना, उनकी शक्तियों एवं दायित्वों का सीमांकन तथा जनता और राज्य के मध्य संबंधों को विनियमित करता है।

प्रत्येक संविधान उस देश के आदर्शों, उद्देश्यों व मूल्यों का दर्पण होता है। संवैधानिक विधि देश की सर्वोच्च विधि होती है तथा सभी अन्य विधियाँ इसी पर आधारित होती हैं। भारतीय संविधान एक जड़ दस्तावेज़ नहीं है, बल्कि यह परिवर्तनशील है, जिसमें ज़रूरत पड़ने पर संशोधन भी किया जा सकता है, जिससे इसकी प्रासंगिकता बनी रहती है।

2.1 संविधान सभा और संविधान निर्माण समिति
(Constituent Assembly and Constitution Making Committee)

कैबिनेट मिशन

ब्रिटेन में 1945 में हुए आम चुनाव में उदारवादी दृष्टिकोण वाली **लेबर पार्टी** के **सर क्लीमेंट एटली** प्रधानमंत्री बने। शांतिपूर्ण तरीके से भारत में सत्ता हस्तांतरण तथा संवैधानिक मामलों के समाधान हेतु मार्च 1946 में एक तीन सदस्यीय मिशन भारत भेजा गया, जिसके **सर स्टैफर्ड क्रिप्स, लार्ड पैथिक लॉरेंस** और **ए.वी. अलेक्जेंडर सदस्य** थे। इसे कैबिनेट मिशन कहा गया। मिशन ने भारत में तत्काल एक अंतरिम सरकार की स्थापना एवं संविधान निर्माण के लिये एक योजना प्रस्तुत की।

भारतीय शासन अधिनियम, 1919	भारत शासन अधिनियम, 1935
• भारतीय शासन अधिनियम, 1919 को मॉण्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार भी कहा जाता है। मॉण्टेग्यू भारत के राज्य सचिव थे, जबकि चेम्सफोर्ड भारत के वायसराय थे। • इस अधिनियम में सर्वप्रथम 'उत्तरदायी शासन' शब्द का स्पष्ट प्रयोग किया गया था। • इस अधिनियम के द्वारा केंद्र में द्विसगठनात्मक व्यवस्था स्थापित की गयी। • इस अधिनियम में सांप्रदायिक आधार पर सिक्खो, भारतीय ईसाईयों, आंग्ल- भारतीयों और यूरोपीयों के लिये भी पृथक निर्वाचन के सिद्धांत को विस्तारित किया। • भारतीय शासन अधिनियम, 1919 द्वारा केंद्रीय और प्रांतीय विषयों की सूची की पहचान कर एवं उन्हें पृथक कर राज्यों पर केंद्रीय नियंत्रण कम किया गया। • इस अधिनियम में द्वैध शासन पद्धति को लागू किया गया जिसके अंतर्गत भारतीयों को अपनी सरकार स्वयं चलाने में प्रशिक्षण दिया गया।	• भारत के लिये तैयार संवैधानिक प्रस्तावों में यह अंतिम और सबसे बड़ा दस्तावेज था। इसमें कुल 323 अनुच्छेद 10 अनुसूचियों एवं 14 भाग थे। वर्तमान भारतीय संविधान पर इस अधिनियम का सर्वाधिक प्रभाव है। • इस अधिनियम के द्वारा अखिल भारतीय संघ की स्थापना की गयी, जिसमें राज्य और यिासतों को एक इकाई की तरह माना गया। • इसने प्रांतों में द्वैध शासन व्यवस्था समाप्त कर दी तथा केंद्र में द्वैध शासन प्रणाली आरंभ किया गया। • 11 प्रांतों में विधान सभा का गठन किया गया। 6 प्रांतों में द्विसदलीय विधानमंडल की स्थापना की गयी। • इस अधिनिम द्वारा संघीय लोक सेवा आयोग की स्थापना के साथ-साथ राज्य लोक सेवा आयोग की स्थापना भी की गयी। • इसके तहत 1937 में दिल्ली में संघीय न्यायालय की स्थापना की गयी। इसमें मुख्य न्यायाधीश तथा अधिकतम व अन्य न्यायाधीश हो सकते थे।

अध्याय
3

संविधान की प्रस्तावना (Preamble of the Constitution)

प्रस्तावना या उद्देशिका किसी संविधान के दर्शन को सार रूप में प्रस्तुत करने वाली संक्षिप्त अभिव्यक्ति होती है। सर्वप्रथम अमेरिकी संविधान निर्माताओं ने अपने संविधान में प्रस्तावना को शामिल किया था। भारतीय संविधान की प्रस्तावना अमेरिकी संविधान से प्रेरित है। संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रस्तावना का प्रथम वाक्य भी 'हम संयुक्त राज्य अमेरिका के लोग' से प्रारंभ होता है। इसके अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रस्तावना में आदर्श संघ बनाने के लिये न्याय स्थापित करने का उल्लेख भी मिलता है। इसके बाद जैसे-जैसे विभिन्न देशों ने अपने संविधान का निर्माण किया, उनमें से कई देशों ने प्रस्तावना को महत्त्वपूर्ण समझकर अपने संविधान का हिस्सा बनाया। भारतीय संविधान सभा ने 22 जनवरी, 1947 को नेहरू के उद्देश्य प्रस्ताव को स्वीकार किया। इसी उद्देश्य प्रस्ताव का विकसित रूप हमारे संविधान की प्रस्तावना (उद्देशिका) है। उद्देश्य प्रस्ताव और प्रस्तावना मिलकर संविधान के दर्शन को मूर्त रूप प्रदान करते हैं। भारतीय संविधान की प्रस्तावना का संबंध इसके उद्देश्यों, लक्ष्यों तथा इसके आधारभूत सिद्धांतों से है। प्रख्यात संवैधानिक विशेषज्ञ एक ए पालकी करता थे प्रतक्षता को संविधान का परिचय पत्र करता है।

बेरूबारी संघवाद (1960) में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि प्रस्तावना संविधान का भाग नहीं है। यद्यपि बाद में केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि प्रस्तावना संविधान का अंग है क्योंकि जब अन्य सभी उपबंध अधिनियमित किये जा चुके थे, उसके पश्चात् प्रस्तावना को अलग से पारित किया गया। संविधान के अन्य भागों की तरह प्रस्तावना में भी संशोधन संभव है, बशर्ते वह आधारभूत ढाँचे को क्षति न पहुँचाता हो।

3.1 प्रस्तावना की विषयवस्तु *(Content of the Preamble)*

1976 में 42वें संविधान संशोधन के माध्यम से प्रस्तावना में तीन शब्द– **समाजवादी (Socialist)**, **पंथनिरपेक्ष (Secular)** तथा **अखंडता (Integrity)** जोड़े गए थे। इन शब्दों के जुड़ने के बाद प्रस्तावना का वर्तमान रूप इस प्रकार है–

प्रस्तावना (उद्देशिका)

हम, भारत के लोग, भारत को एक **संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य** बनाने के लिये तथा उसके समस्त नागरिकों को

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक **न्याय**,

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की **स्वतंत्रता**,

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिये तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा तथा राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली **बंधुता** बढ़ाने के लिये दृढ़ संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत् दो हजार छह विक्रमी) को **एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

3.2 प्रस्तावना की उपयोगिता *(Utility of the Preamble)*

भारतीय संविधान की प्रस्तावना को **संविधान की आत्मा** कहा गया है। संविधान की प्रस्तावना संविधान की व्याख्या का आधार प्रस्तुत करती है। यह संविधान का दर्पण है, जिसमें पूरे संविधान की तस्वीर दिखाई पड़ती है। इसकी उपयोगिता यह है कि यह संविधान के स्रोत, राजव्यवस्था की प्रकृति एवं संविधान के उद्देश्यों से परिचय कराती है। इसके साथ

अध्याय
4

संघ और उसका राज्य क्षेत्र (Union and it's Territory)

भारतीय संविधान के भाग-1 (अनुच्छेद 1 से 4) में इस प्रावधान का उल्लेख किया गया है कि भारत के राज्य क्षेत्र में किस प्रकार की इकाइयाँ होंगी तथा उनका भारत संघ (Union of India) के साथ क्या संबंध होगा। इस भाग को सही रूप में समझने के लिये हम सभी अनुच्छेदों पर क्रमशः विचार करेंगे।

4.1 संघ और उसके राज्यक्षेत्र से संबंधित महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद *(Important Articles Related to the Union and it's Territories)*

अनुच्छेद 1

- संविधान के **अनुच्छेद 1(1)** में कहा गया है कि **"भारत अर्थात् इंडिया राज्यों का संघ होगा"** (India, that is Bharat shall be a union of States)। इस अनुच्छेद से स्पष्ट है कि हमारे देश का औपचारिक नाम **इंडिया** है। इस अनुच्छेद में उल्लिखित **यूनियन (Union)** शब्द का प्रयोग करने के कारण को स्पष्ट करते हुए डॉ. भीमराव अंबेडकर ने कहा था-
  - भारत विभिन्न राज्यों के मध्य किसी समझौते का परिणाम नहीं है।
  - किसी भी राज्य को भारत संघ से पृथक् होने का अधिकार नहीं है।
- **अनुच्छेद 1(2)** में उल्लेख है कि राज्य और राज्यक्षेत्र वे होंगे जो संविधान की **पहली अनुसूची** में विनिर्दिष्ट हैं।
- **अनुच्छेद 1(3)** में उल्लेख है कि भारत के राज्यक्षेत्र में-
  - राज्यों के राज्यक्षेत्र
  - पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट संघ राज्यक्षेत्र और
  - ऐसे अन्य राज्यक्षेत्र जो अर्जित किये जाएँ, समाविष्ट होंगे।

प्रत्येक प्रभुत्व-संपन्न 'राष्ट्र' को नए राज्यक्षेत्रों के अर्जन का अधिकार होता है। ऐसे अर्जन हेतु विधि बनाने की आवश्यकता नहीं होती अपितु अर्जन अंतर्राष्ट्रीय विधि द्वारा अनुमोदित रीति से होता है, जैसे-युद्ध में जीतकर, संधि के अनुसरण में उपहार या लीज में प्राप्त करके या स्वामीविहीन भूमि पर कब्ज़ा करके। अर्जन के पश्चात् वह राज्यक्षेत्र भारत का अंग हो जाता है और केंद्रशासित प्रदेश (संघ राज्यक्षेत्र) की तरह शासित होता है।

अनुच्छेद 2

- **अनुच्छेद** 2 में उल्लेख है कि "संसद विधि द्वारा, ऐसे निर्बंधनों (Restrictions) और शर्तों (conditions) पर जो वह ठीक समझे, संघ में नए राज्य का प्रवेश या स्थापना कर सकेगी।" इसका अर्थ है कि संसद उस राज्य को, जो पहले से संस्थापित है परंतु भारत का अंग नहीं है, भारत में शामिल कर सकेगी अर्थात् अनुच्छेद-2 उन राज्यों को जो भारतीय संघ के भाग नहीं है, के संघ में प्रवेश एवं गठन से संबंधित हैं।

अनुच्छेद 3

नए राज्य के निर्माण, राज्यों के नाम, सीमा, क्षेत्र बदलने की प्रक्रिया का वर्णन **अनुच्छेद 3** में किया गया है कि **संसद विधि द्वारा-**

- किसी राज्य में से उसका राज्यक्षेत्र अलग करके अथवा दो या अधिक राज्यों को या राज्यों के भागों को मिलाकर अथवा किसी राज्य क्षेत्र के किसी राज्य के भाग के साथ मिलाकर नए राज्य का निर्माण कर सकेगी;
- किसी राज्य का क्षेत्र बढ़ा सकेगी;

अध्याय
5

नागरिकता संबंधी उपबंध
(Provisions Related to Citizenship)

नागरिकता एक विशेष राजनीतिक, सामाजिक, राष्ट्रीय या मानव समुदाय का एक नागरिक होने की अवस्था है। एक नागरिक एक राजनीतिक समुदाय का सहभागी सदस्य होता है। राष्ट्रीय राज्य या स्थानीय सरकार की कानूनी आवश्यकताओं को पूरा करके नागरिकता प्राप्त की गयी है। एक राष्ट्र अपने नागरिकों को कुछ अधिकार और विशेषधिकार देता है जो गैर नागरिकों को प्राप्त नहीं होते है। भारतीय संविधान के भाग-2 में अनुच्छेद 5 से 11 में भारत की नागरिकता संबंधी प्रावधान दिये गए हैं। ये प्रावधान स्पष्ट करते हैं कि इस राज्यक्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों में से भारत के नागरिक (Citizens) कौन होंगे? संविधान में नागरिकता से संबंधित बहुत कम प्रावधान दिये गए हैं, इसमें केवल यह बताया गया है कि संविधान लागू होने के दिन किन व्यक्तियों को भारत का नागरिक माना जाएगा। जबकि बाद की स्थितियों के लिये नागरिकता संबंधी कानून बनाने की पूर्ण शक्ति संसद को दी गई है। इस शक्ति के आधार पर संसद ने सर्वप्रथम 1955 में 'नागरिकता अधिनियम' पारित किया था।

व्यक्तियों के विभिन्न वर्ग *(Different categories of persons)*

'जनसंख्या' राज्य के चार अनिवार्य घटकों में से एक है। राज्य की जनसंख्या में चार प्रकार के व्यक्ति हो सकते हैं-

(i) **नागरिकः** ये राज्य के पूर्ण सदस्य होते हैं और उसके प्रति निष्ठा रखते हैं। कोई भी राज्य अपने नागरिकों को सभी सिविल व राजनीतिक अधिकार देता है। आधुनिक समय में इनकी पहचान यह है कि वे किस देश का पासपोर्ट रखते हैं अथवा रखने की योग्यता रखते हैं।

(ii) **विदेशीः** ये वे व्यक्ति हैं जो किसी अन्य देश के नागरिक होते हैं। विदेशी मित्र भी हो सकते हैं और शत्रु भी। इनको वे सभी अधिकार प्राप्त नहीं होते जो नागरिकों को प्राप्त हैं। ऐसे व्यक्तियों को अनुच्छेद 21 के तहत **जीवन का अधिकार** प्राप्त है परंतु अनुच्छेद 19 के तहत प्रदत्त **स्वतंत्रता का अधिकार** प्राप्त नहीं है। साथ ही विदेशी शत्रु को अनुच्छेद 22(3) का लाभ उठाने का भी अधिकार नहीं है परंतु विदेशी मित्र इस अधिकार का लाभ उठा सकते हैं।

(iii) **राज्यविहीन व्यक्तिः** ये किसी देश के नागरिक नहीं होते। कुछ देश ऐसे भी हो सकते हैं जिनमें इस प्रकार का कोई व्यक्ति न हो। उन्हें वही अधिकार प्राप्त होते हैं जो विदेशियों को होते हैं। भारत में असम में रहने वाले बहुत से अवैध प्रवासियों के बच्चे इसी श्रेणी में आते हैं। वे न तो वंश के आधार पर बांग्लादेश के नागरिक बन पाए और न ही देशीयकरण के आधार पर भारत के।

(iv) **शरणार्थीः** शरणार्थी वे व्यक्ति होते हैं जो अपने देश में नस्ल, धर्म, भाषा, राष्ट्रीयता, राजनीतिक विचारधारा या सामाजिक पहचान के आधार पर उत्पीड़न सहने या उत्पीड़न के भय से किसी अन्य देश में शरण ले लेते हैं, जैसे- भारत में शरण लेने वाले दलाई लामा और उनके तिब्बती समर्थक।

नागरिकों के विशेष अधिकार *(Special rights of citizens)*

प्रायः सभी देश अपने नागरिकों को शेष व्यक्तियों की तुलना में कुछ विशेषाधिकार देते हैं। भारतीय संविधान में भी कई ऐसे अधिकारों का उल्लेख है जो केवल भारतीय नागरिकों को ही प्राप्त हैं, अन्य किसी को नहीं। ये निम्नलिखित हैं–

- अनुच्छेद 15 द्वारा प्रदत्त धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर प्रतिषेध का अधिकार।
- अनुच्छेद 16 द्वारा प्रदत्त लोक नियोजन में अवसर की समता का अधिकार।
- अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता व अन्य अधिकार।
- अनुच्छेद 29 और 30 के अधीन अल्पसंख्यक वर्गों की भाषा, लिपि व संस्कृति और शिक्षा संबंधी का अधिकार।

अध्याय
6

मूल अधिकार (Fundamental Rights)

मूल अधिकार (मौलिक अधिकार) का अर्थ ऐसे अधिकारों से है जिनके द्वारा व्यक्ति अपना पूर्ण मानसिक, भौतिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक और नैतिक विकास कर सके। संविधान के भाग-3 में अनुच्छेद 12 से 35 तक मूल अधिकारों का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। भारत के संविधान में मूल अधिकार संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान से लिया गया है। इसे 'भारत का मैग्नाकार्टा' भी कहा जाता है। मूल अधिकार देश की मूल विधि अर्थात् संविधान में उल्लिखित होते हैं। ये **संविधान द्वारा रक्षित और प्रवृत्त** होते हैं। मूल अधिकार सामान्यत: व्यक्ति के अधिकारों को बढ़ाते हैं तथा राज्य के अधिकारों को सीमित करते हैं। **मूल अधिकार सकारात्मक** और **नकारात्मक** दोनों प्रकृति के हो सकते हैं।

6.1 मूल अधिकार की पृष्ठभूमि *(Background of Fundamental Rights)*

प्रख्यात संविधान विशेषज्ञ एम.वी. पायली के अनुसार मूल अधिकार एक ही समय पर शासकीय शक्ति से व्यक्ति के स्वतंत्रता की रक्षा करते है और शासकीय शक्ति द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित भी किया जाता है। मूल अधिकार का सर्वप्रथम विकास ब्रिटेन में हुआ था। ब्रिटिश सम्राट द्वारा 1215 ई. में हस्ताक्षरित अधिकार पत्र मूल अधिकार संबंधी प्रथम लिखित दस्तावेज माना जाता है। फ्राँस में सर्वप्रथम 1789 में मानव एवं नागरिकों के अधिकार घोषणा पत्र द्वारा फ्राँस की जनता को कुछ मूलभूत अधिकार प्रदान किया गया था। 1781 में अमेरिकी संविधान में संशोधन द्वारा अधिकार-पत्र (Bill of Rigats) को जोड़कर मूल अधिकार का प्रावधान किया गया।

भारत में मूल अधिकारों के संबंध में सर्वप्रथम 1895 में मांग की गयी थी। भारत के लिये बनाए जा रहे संविधान में मौलिक अधिकारों को सम्मिलित करने की अनौपचारिक मांग सबसे पहले 1918 के मॉटफार्ड घोषणा के माध्यम से हुई थी। उसके बाद 1928 में नेहरू समिति ने अपनी रिपोर्ट में भारत के लिये बनाए जाने वाले संविधान में मूल अधिकारों की घोषणा की मांग की थी। भारतीय राष्ट्रीय कॉन्ग्रेस ने 1931 में कराची में आयोजित अपने सत्र में पहली बार अपने संकल्प में मौलिक अधिकारों की एक व्यापक योजना की रूपरेखा प्रस्तुत की। 1945 ई. में तेज बहादुर सप्रु ने भी संविधान के संबंध में प्रस्तुत रिपोर्ट में भारतीयों को मूल अधिकार दिये जाने की वकालत की थी। संविधान निर्माण के समय संविधान सभा द्वारा मूल अधिकार तथा अल्पसंख्यक अधिकार के संबंध में परामर्श के लिये वल्लभभाई पटेल की अध्यक्षता में एक परामर्श समिति का गठन किया गया था। भारतीय संविधान के भाग-3 में मूल अधिकार संबंधी प्रावधान का उल्लेख किया गया।

भारत में मूल अधिकारों की आवश्यकता क्यों? *(Why the need of fundamental rights in India?)*

- संसदीय प्रणाली में जहाँ कार्यपालिका का विधायिका में बहुमत होता है, हमेशा यह आशंका रहती है कि सरकार संसदीय बहुमत का प्रयोग करते हुए मूल अधिकारों को छीनने वाला कानून न बना दे।
- भारत में धार्मिक और नस्लीय वैविध्य काफी ज़्यादा है, जहाँ अल्पसंख्यक वर्ग अपनी कम जनसंख्या के कारण प्राय: कमज़ोर सिद्ध होते हैं; उन्हीं कमज़ोर वर्गों के हितों की रक्षा और अधिकारों की सुरक्षा के लिये मूल अधिकारों की आवश्यकता महसूस हुई।
- भारत में संघात्मक पद्धति को स्वीकार किया गया है, ऐसे में यह संभावना स्वाभाविक है कि किसी प्रांत की सरकार नागरिकों के अधिकार छीनने का प्रयास करे। इसका एक ही समाधान था कि संविधान में ही व्यक्तियों के **मूल अधिकारों की गारंटी** दे दी जाए ताकि सरकारें संविधान से बँधी रहें।
- मूल अधिकारों की घोषणा की आवश्यकता इसलिये भी थी ताकि जनता को यह बोध हो कि संविधान की नज़र में कोई विशेष नहीं है बल्कि सबके हक और अधिकार समान हैं।
- यह अधिकार विशेष रूप से दलित, आदिवासी अल्पसंख्यक में शोषितों तथा स्त्रियों सहित कई ऐसे वर्गों के लिये आवश्यक थे जो सदियों से शोषण और दमन का शिकार रहे हैं। ऐसे लोगों को मुख्य धारा में लाने के लिये मूल अधिकारों की व्यवस्था करना ज़रूरी था यह सामाजिक आर्थिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने का एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है।

अध्याय
7

राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांत (Directive Principles of State Policy)

भारतीय संविधान निर्माता नकारात्मक और सकारात्मक दोनों प्रकार के अधिकारों की आवश्यकता से परिचित थे। वे भारत में व्याप्त गरीबी, निरक्षरता, शोषण और सामाजिक तथा आर्थिक असमानताओं से भी भली-भाँति परिचित थे। इसलिये संविधान निर्माताओं ने न केवल नकारात्मक अधिकारों के रूप में मौलिक अधिकारों की संकल्पना प्रस्तुत की बल्कि सकारात्मक न्याय व अधिकारों को महत्त्वपूर्ण स्थान देने के लिये राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों का भी प्रावधान किया।

संविधान के **भाग-4** में **राज्य के नीति-निदेशक तत्त्व** (डी.पी.एस.पी.) का उल्लेख किया गया है। अनुच्छेद 36 से 51 में इसका विस्तार से उल्लेख किया गया है। संविधान का यह भाग **आयरलैंड के संविधान** से प्रभावित है। इसके माध्यम से संविधान राज्य को सामाजिक तथा आर्थिक न्याय सुनिश्चित करने के लिये नैतिक दायित्व अभ्यारोपित करता है।

7.1 नीति-निदेशक तत्त्वों का इतिहास *(History of Directive Principles)*

भारतीय संविधान में नीति-निदेशक तत्त्वों का विकास, मूल अधिकारों के विकास के साथ ही हो गया था। संविधानसभा के सदस्यों में इस बात पर सहमति बन गई थी कि स्वतंत्र भारत में प्रत्येक व्यक्ति को मूल अधिकार तो दिये ही जाने चाहिये साथ ही राज्य द्वारा ऐसे आदर्शों को साधने की कोशिश भी की जानी चाहिये जो सामाजिक न्याय के लिये वांछनीय हैं। इन सिद्धांतों को मूल अधिकारों के रूप में दिया जाना तत्कालीन परिस्थितियों में संभव नहीं था। ऐसे अधिकार जिन्हें तत्काल देना संभव नहीं था, उन अधिकारों को **बी.एन. राव** की सलाह पर नीति-निदेशक तत्त्वों की श्रेणी में रख दिया गया ताकि जब सरकारें सक्षम हो जाएंगी तब धीरे-धीरे इन उपबंधों को लागू करेंगी। इन्हीं उपबंधों को संविधान के **भाग-4** में रखा गया तथा **राज्य के नीति के निदेशक सिद्धांत** नाम दिया गया। डॉ. अबिडकर ने इसे भारत के संविधान की आदर्श विशेषता कहा था।

राज्य की नीति-निदेशक तत्त्वों की विशेषताएँ *(Features of directive principles of state policy)*

- राज्य की नीति-निदेशक तत्त्व से स्पष्ट होता है कि नीतियों एवं कानूनों को प्रभावशाली बनाते समय राज्य इन तत्त्वों को ध्यान में रखेगा। यह कार्यपालिका और प्रशासनिक मामलों में राज्य के लिये एक अनुदेश हैं। अनुच्छेद 36 के अनुसार भाग-4 में राज्य शब्द का वही अर्थ है जो मूल अधिकारों से संबंधित भाग 3 में है।
- यह भारत शासन अधिनियम, 1935 में उल्लेखित अनुदेशों के समान है। डॉ. बी.आर. अंबेडकर के शब्दों में निदेशक तत्त्व अनुदेशों के समान है जो भारत शासन अधिनियम, 1935 के अंतर्गत ब्रिटिश सरकार द्वारा गवर्नर जनरल और भारत की औपनिवेशिक कॉलोनियों के गवर्नरों को जारी किये जाते थे, जिसे निदेशक-तत्त्व कहा जाता है, वह इन अनुदेशों का ही दूसरा नाम है।
- निदेशक-तत्त्वों की प्रकृति न्यायोचित नहीं है। इनके हनन होने पर न्यायालय द्वारा इन्हें लागू नहीं कराया जा सकता। अतः सरकार (केंद्र, राज्य एवं स्थानीय) इन्हें लागू करने के लिये बाध्य नहीं है।
- राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों का उद्देश्य **लोक-कल्याणकारी राज्य** की स्थापना करना है और ये प्रकृति में सकारात्मक हैं।
- ये संविधान की प्रस्तावना में उद्धृत सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय तथा स्वतंत्रता, समानता और बंधुता की भावना पर आधारित हैं।
- ये वे विचार हैं जिन्हें संविधान निर्माताओं ने भविष्य में बनने वाली सरकारों के समक्ष एक **पथ-प्रदर्शक** के रूप में रखा है।
- जनता के हित और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना के लिये नीति-निदेशक तत्त्वों को यथाशक्ति कार्यान्वित करना राज्य का कर्तव्य है।

- डी.पी.एस.पी. पर गांधीवाद, समाजवाद तथा उदारवाद का प्रभाव है।
- इसके द्वारा आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना की जाती है।
- इसको लागू करने का दायित्व राज्य का है।
- इसे न्यायालय द्वारा लागू नहीं कराया जा सकता अर्थात् कानूनी रूप से प्रवर्तनीय नहीं है।

अध्याय
8

मूल कर्तव्य (Fundamental Duties)

भारत के संविधान में मूल अधिकारों के साथ मूल कर्तव्यों (मौलिक कर्तव्यों) को भी शामिल किया गया है। वस्तुत: अधिकार और कर्तव्य एक-दूसरे के पूरक हैं। अधिकारविहीन कर्तव्य निरर्थक होते हैं जबकि कर्तव्यविहीन अधिकार निरंकुशता पैदा करते हैं। भारतीय संविधान की एक प्रमुख विशेषता है कि यह नागरिकों के अधिकारों एवं कर्त्तव्यों को संतुलित करता है।

यदि व्यक्ति को 'गरिमापूर्ण जीवन' का अधिकार प्राप्त है तो उसका कर्तव्य बनता है कि वह अन्य व्यक्तियों के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार का भी खयाल रखे। यदि व्यक्ति को 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' प्यारी है तो यह भी ज़रूरी है कि उसमें दूसरों की 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' के प्रति धैर्य और सहिष्णुता विद्यमान हो। देश नागरिकों से यह अपेक्षा करता है कि वे कुछ कर्त्तव्यों का पालन करें।

रोचक बात यह है कि विश्व के अधिकांश लोकतांत्रिक देशों के संविधान में नागरिकों के कर्तव्यों का उल्लेख नहीं किया गया है, उदारहण के लिये अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा और फ्राँस आदि देशों में ऐसी कोई कर्त्तव्यों की सूची नहीं हैं। उनमें केवल मूल अधिकारों की घोषणा की गई है। कुछ साम्यवादी देशों में मूल कर्तव्यों की घोषणा करने की परंपरा दिखाई पड़ती है। भूतपूर्व सोवियत संघ का उदाहरण इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। **भारतीय संविधान में उल्लिखित मूल कर्तव्य भूतपूर्व सोवियत संघ के संविधान से ही प्रभावित हैं।** रूस के संविधान में घोषणा की गई कि नागरिकों के अधिकार एवं स्वतंत्रता उनके कर्त्तव्यों एवं दातित्वों से जुड़े हुए हैं।

भारतीय संविधान में मूल कर्तव्यों का इतिहास *(History of fundamental duties in Indian constitution)*

भारतीय संविधान में भी प्रारंभ में मूल कर्तव्य शामिल नहीं थे। इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में 1975 में आपातकाल की घोषणा की गई, तभी **सरदार स्वर्ण सिंह** के नेतृत्व में संविधान में उपयुक्त संशोधन सुझाने के लिये एक समिति का गठन किया गया था। इस समिति ने यह सुझाव दिया कि संविधान में मूल अधिकारों के साथ-साथ मूल कर्तव्यों का समावेश होना चाहिये। समिति का तर्क यह था कि भारत में अधिकांश लोग सिर्फ अधिकारों पर बल देते हैं, यह नहीं समझते कि हर अधिकार किसी न किसी कर्तव्य के सापेक्ष होता है।

स्वर्ण सिंह समिति की अनुशंसाओं के आधार पर **42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976** के द्वारा संविधान में **भाग-4क** अंत:स्थापित किया गया और उसके भीतर **अनुच्छेद 51क** को रखते हुए 10 मूल कर्तव्यों की सूची प्रस्तुत की गई। "यद्यपि स्वर्ण सिंह समिति ने संविधान में आठ मूल कर्त्तव्यों को जोड़े जाने का का सुझाव दिया था"। आगे चलकर **86वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2002** के माध्यम से एक और मूल कर्तव्य जोड़ा गया। जिसके तहत 6-14 वर्ष की आयु के बच्चों के माता-पिता और संरक्षकों पर यह कर्तव्य आरोपित किया गया है कि वे अपने बच्चे अथवा प्रतिपाल्य को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान करेंगे। इस प्रकार वर्तमान में मूल कर्तव्यों की संख्या 12 है।

मूल कर्तव्यों की सूची *(List of fundamental duties)*

वर्तमान में संविधान के भाग-4क तथा अनुच्छेद 51क के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक के कुल 11 मूल कर्तव्य हैं। इसके अनुसार, भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह-

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे।

(ख) स्वतंत्रता के लिये हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में सँजोए रखे और उनका पालन करें।

अध्याय
9

संघ की कार्यपालिका (Executive of Union)

राजव्यवस्था का वह अंग जो नीति निर्माण, नीति क्रियान्वयन तथा विधियों का क्रियान्वयन का कार्य करे कार्यपालिका कहलाती है। कार्यपालिका अपनी नीतियों एवं कार्यों के लिये विधायिका के प्रति उत्तरदायी है। भारतीय संविधान के **भाग-5 के अनुच्छेद 52 से 78** तक में संघ की कार्यपालिका का उल्लेख किया गया है जिसमें सम्मिलित अंग राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्रिपरिषद तथा महान्यायवादी आदि हैं। भारतीय संविधान केंद्र एवं राज्य दोनों में संसदीय सरकार की व्यवस्था करता है। जहाँ एक तरफ अनुच्छेद 74 और अनुच्छेद 75 के माध्यम से केंद्र में संसदीय स्वरूप की व्यवस्था होती है तो वहीं दूसरी तरफ अनुच्छेद 163 और अनुच्छेद 164 के माध्यम से राज्यों के लिये संसदीय व्यवस्था का प्रावधान किया जाता है।

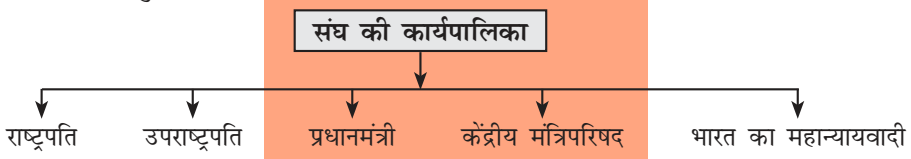

9.1 राष्ट्रपति *(President)*

राष्ट्रपति भारत का राज्य प्रमुख होता है। वह भारत का प्रथम नागरिक है और राष्ट्र की एकता, अखंडता एवं सुदृढ़ता का प्रतीक है। संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होती है और वह इसका प्रयोग संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करता है। राष्ट्रपति देश की सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति भी होता है।

राष्ट्रपति कार्यपालिका का प्रधान होता है। यद्यपि कार्यपालिका के प्रधान का यह नामकरण अमेरीकी संविधान के समान है, लेकिन भारतीय राष्ट्रपति के कार्य और शक्तियाँ अमेरिकी राष्ट्रपति के समान नहीं है। अमेरिकी अध्यक्षात्मक व्यवस्था में कार्यपालिका का वैधानिक प्रधान ही वास्तविक प्रधान होता है, लेकिन भारत में ब्रिटेन जैसी संसदात्मक व्यवस्था को अपनाया गया है जिसके अंतर्गत कार्यपालिका का एक वैधानिक प्रधान होता है और दूसरा वास्तविक प्रधान। राष्ट्रपति भारतीय संघ की कार्यपालिका है और भारतीय संघ में उसकी स्थिति अमेरिकी राष्ट्रपति के स्थान पर ब्रिटिश सम्राट के अत्यधिक करीब है।

राष्ट्रपति का निर्वाचन *(Election of President)*

संविधान के अनुच्छेद 54 तथा 55 में राष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित उपबंध दिये गए हैं। अनुच्छेद 54 में इस बात का निर्देश है कि राष्ट्रपति के निर्वाचन में मत देने का अधिकार किसे होगा, जबकि अनुच्छेद 55 में बताया गया है कि निर्वाचन की प्रक्रिया क्या होगी।

निर्वाचकमंडल (Electoral college)

राष्ट्रपति का निर्वाचन जनता प्रत्यक्ष रूप से नहीं करती बल्कि एक निर्वाचक मंडल के सदस्यों द्वारा उसका निर्वाचन किया जाता है। अनुच्छेद 54 में स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन एक निर्वाचक मंडल के माध्यम से होगा जिसमें–

(क) संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य तथा

(ख) राज्यों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य शामिल होंगे।

इस निर्वाचकमंडल में संविधान के '70वें संशोधन अधिनियम, 1992' के द्वारा एक स्पष्टीकरण अंत:स्थापित किया गया था। इसके अनुसार राष्ट्रपति के निर्वाचन के संबंध में राज्यों की सूची में **'दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र'** और **'पुडुचेरी संघ राज्यक्षेत्र'** भी शामिल होंगे। जम्मू एवं कश्मीर के संघ शासित प्रदेश बन जाने के बाद भी के निर्वाचित सदस्य पूर्ववत निर्वाचक मंडल के सदस्य बने रहेंगे।

अध्याय
10

राज्य की कार्यपालिका (State Executive)

भारत विविधताओं से परिपूर्ण देश है। यहाँ प्रत्येक राज्यों में भाषा, रीति-रिवाज़ एवं संस्कृति संबंधी विविधताएँ पाई जाती हैं। इन विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान में संघ एवं राज्यों से संबंधित संवैधानिक व्यवस्थाओं में एकरूपता रखने का प्रयास किया गया है। जिस प्रकार संघीय कार्यपालिका राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, मंत्रिपरिषद (जिसका प्रमुख प्रधानमंत्री होता है) तथा महान्यायवादी से मिलकर बनती है, उसी प्रकार राज्यों में कार्यपालिका राज्यपाल, राज्य मंत्रिपरिषद (जिसका प्रधान मुख्यमंत्री होता है) तथा राज्य महाधिवक्ता से मिलकर बनती है। राज्य कार्यपालिका के संबंध में उपबंध संविधान के **भाग-6 के अनुच्छेद 153 से 167** में उल्लिखित है।

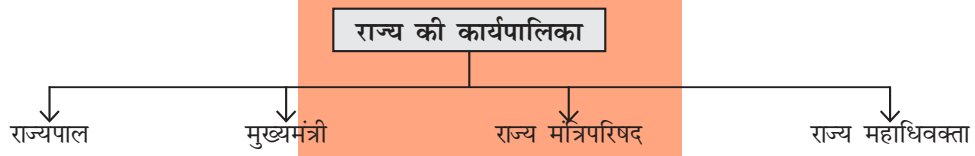

10.1 राज्यपाल *(The Governor)*

राज्य की संवैधानिक व्यवस्था में राज्यपाल का पद अत्यंत महत्त्व रखता है। संविधान सभा के सदस्य के.एम. मुंशी ने राज्यपाल के पद के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि राज्यपाल संवैधानिक औचित्य का प्रहरी और वह कड़ी है जो राज्य को केंद्र के साथ जोड़ते हुए भारत की एकता के लक्ष्य को प्राप्त करता है। संविधान के अनुच्छेद 153 के अनुसार प्रत्येक राज्य के लिये एक राज्यपाल होगा, परंतु 7वें संविधान संशोधन द्वारा यह जोड़ा गया कि एक ही व्यक्ति को दो या उससे अधिक राज्यों का राज्यपाल नियुक्त किया जा सकता है। राज्यपाल राज्य की कार्यपालिका का संवैधानिक प्रमुख होने के साथ ही केंद्र का प्रतिनिधि भी होता है तथा राज्यपाल राज्य विधानमंडल का अभिन्न अंग होता है।

भारतीय संविधान में राज्यपाल की दोहरी भूमिका की परिकल्पना की गई है एक तो राज्य के संवैधानिक प्रधान के रूप में और दूसरे केंद्र के अभिकर्त्ता के रूप में। भारत के संविधान निर्माताओं ने राज्यपाल पद का सृजन करते समय संविधान सभा में पर्याप्त रूप से विचार-विमर्श कर के इसके संवैधानिक संस्थागत और प्रक्रियागत स्वरूप का निर्धारण किया था। यद्यपि संविधान सभा में राज्यपाल पद के बारे में डॉ. भीमराव अंबेडकर के.एम. मुंशी, टी.टी. कृष्णामाचारी, सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर एच.वी. कामथ और प्रो. के.टी. शाह ने जिस तरह से अपने विचार व्यक्त किये है, उसमें यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि राज्यपाल राज्य का संवैधानिक अध्यक्ष मात्र है, और उसकी वास्तविक शक्तियों का उपयोग मुख्यमंत्री के नेतृत्व में मंत्रिपरिषद द्वारा किया जाता है। संसदीय व्यवस्था की संवैधानिक परंपरा में यही स्वरूप व्यावहारिक भी है।

राज्यपाल की नियुक्ति *(Appointment of the Governor)*

संविधान निर्माताओं के समक्ष मुख्य प्रश्न यह था कि राज्यपाल का चयन किस प्रकार किया जाए? अमेरिका जैसे संघात्मक देशों में राज्यपाल का चयन प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा तथा कनाडा जैसे देशों में राज्यपाल की नियुक्ति केंद्र द्वारा की जाती है लेकिन भारतीय परिस्थितियों में कौन-सी व्यवस्था उपयुक्त होगी, इस पर विचार-विमर्श के उपरांत राज्यपाल की नियुक्ति प्रक्रिया को अपनाया गया। इस निर्णय के **निम्न आधार** माने जाते हैं-

संविधान में संघ और राज्यों के लिये संसदीय व्यवस्था को अपनाया गया था। एक निर्वाचित राज्यपाल और संसदीय शासन व्यवस्था परस्पर मेल नहीं खाते। निर्वाचित प्रधान वास्तविक शक्तियाँ ग्रहण कर सकता है और राज्य प्रशासन के

अध्याय
11

संघ की विधायिका (Legislature of Union)

भारतीय संविधान में संसदीय लोकतांत्रिक प्रणाली को अपनाया गया है, जिसे सरकार का **वेस्टमिंस्टर मॉडल** भी कहा जाता है। संसदीय लोकतंत्र में संसद में सामान्यत: तीन लक्षण होते हैं, प्रथम- यह जनता का प्रतिनिधित्व करती है, द्वितीय- इसमें उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार होती है तथा तृतीय- मंत्रिपरिषद लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है।

भारतीय संसद राष्ट्रपति, लोकसभा एवं राज्यसभा से मिलकर बनती है। राष्ट्रपति इसका अभिन्न अंग है, क्योंकि कोई भी विधेयक राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चात् ही विधि बन पाता है। संसद की संरचना, अवधि, अधिकारियों, प्रक्रियाओं, विशेषाधिकारों तथा शक्तियों का वर्णन संविधान के भाग-5 के अंतर्गत अनुच्छेद 79 से 122 में किया गया है।

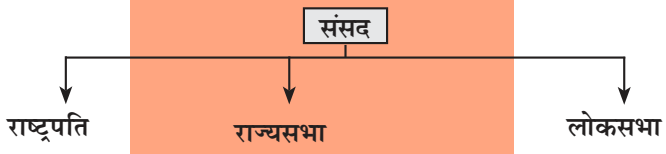

11.1 संसद का गठन *(Constitution of Parliament)*

संविधान के अनुच्छेद 79 के तहत संसद के गठन का प्रावधान है। भारत की संसद के तीन प्रमुख अंग- राष्ट्रपति, राज्यसभा एवं लोकसभा हैं। राज्यसभा को उच्च सदन या दूसरा चैंबर या बड़ों की सभा कहते हैं तथा लोकसभा को निम्न सदन या पहला चैंबर या चर्चित सभा कहा जाता है। यद्यपि राष्ट्रपति संसद में किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता है और न ही वह संसद की कार्यवाही में हिस्सा लेते हैं लेकिन राष्ट्रपति संसद का अभिन्न अंग हैं, क्योंकि संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित कोई विधेयक तभी विधि बनता है जब राष्ट्रपति इसे अपनी स्वीकृति देता है।

राज्यसभा का गठन *(Composition of the council of state)*

हमारी संसद का एक सदन 'राज्यसभा' है जिसे अंग्रेज़ी में 'Council of States' कहा जाता है। इसकी संरचना प्राय: वैसी ही है जैसी इंग्लैंड में 'हाउस ऑफ लॉर्ड्स' की है। कुछ मामलों में इसे अमेरिकी कॉन्ग्रेस के द्वितीय सदन 'सीनेट' के समकक्ष भी माना जा सकता है। इंग्लैंड की राजव्यवस्था के अनुकरण पर इसे उच्च सदन (Upper House) भी कह दिया जाता है, हालाँकि संविधान में ऐसी अभिव्यक्ति का प्रयोग नहीं किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 80 में राज्यसभा की संरचना का वर्णन है जबकि अनुच्छेद 81 में लोकसभा की संरचना का उल्लेख मिलता है।

राज्यसभा की संरचना	संवैधानिक उपबंध	वर्तमान स्थिति
1. राज्यों एवं संघ राज्यक्षेत्रों के प्रतिनिधि	238	233 (229 सदस्य राज्यों से तथा 4 सदस्य संघ राज्यक्षेत्रों से)
2. राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत सदस्य	12	12
अधिकतम सदस्य	**250**	**245**

- राज्यसभा में राज्यों एवं संघ राज्यक्षेत्रों की सीटों का बँटवारा जनसंख्या के आधार पर किया गया है। किसी राज्य की जनसंख्या के पहले 50 लाख व्यक्तियों में हर 10 लाख व्यक्तियों पर एक सदस्य तथा उसके बाद प्रति 20 लाख व्यक्तियों पर राज्यसभा में एक सदस्य होगा जिस कारण अलग-अलग राज्यों से आने वाले प्रतिनिधियों की संख्या में राज्यसभा में

अध्याय
12

राज्य विधायिका
(The State Legislature)

जिस प्रकार केंद्रीय विधायिका भारत के संपूर्ण क्षेत्र के लिये कानूनों का निर्माण करती है, उसी प्रकार राज्य विधायिका राज्य के विषयों से संबंधित विधियों को निर्मित करती है। राज्य विधायिका के गठन में एकरूपता नहीं है, जहाँ किसी राज्य में एक सदन अर्थात् राज्य विधानसभा ही है वहीं कुछ राज्यों में द्वि-सदनीय विधायिका अर्थात् विधानसभा एवं विधानपरिषद दोनों है। अत: राज्य विधानमंडल राज्यपाल और एक सदन वाले राज्यों में विधानसभा और दो सदन वाले राज्यों में विधानसभा और विधानपरिषद् सें मिलकर बनता है।

राज्य विधायिका के संगठन, कार्यकाल, अधिकारियों की प्रक्रियाएँ तथा शक्तियाँ आदि के बारे में संविधान के भाग-6 के अनुच्छेद 168 से 212 में उल्लेख किया गया है। अनुच्छेद 168 में कहा गया है कि प्रत्येक राज्य के लिये एक विधानमंडल होगा, जो राज्यपाल और एक या दो सदनों से मिलकर बनेगा। जहाँ किसी राज्य में विधानमंडल के दो सदन हैं वहाँ एक का नाम विधानपरिषद और दूसरे का नाम विधानसभा होगा और जहाँ केवल एक सदन है वहाँ उसका नाम विधानसभा होगा।

12.1 विधानपरिषद *(The Legislative Council)*

विधानपरिषद का उत्सादन या सृजन तथा इसकी संरचना के बारे में प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 169 और 171 में दिये गए हैं। इनसे संबंधित प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैं-

सृजन तथा उत्सादन *(Creation and abolition)*

- **अनुच्छेद 169** के अनुसार, संसद विधि द्वारा किसी विधानपरिषद वाले राज्य में विधानपरिषद के उत्सादन के लिये या ऐसे राज्य में, जिसमें विधानपरिषद नहीं है, विधानपरिषद के सृजन के लिये उपबंध कर सकेगी, यदि उस राज्य की विधानसभा ने इस आशय का संकल्प विधानसभा की कुल सदस्य संख्या के बहुमत तथा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की संख्या के कम-से-कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर दिया है। लेकिन अनुच्छेद 169(3) में यह स्पष्टीकरण है कि विधानपरिषद के उत्सादन या सृजन की विधि अनुच्छेद 368 के तहत संविधान संशोधन नहीं मानी जाएगी।
- वर्तमान में **6 राज्यों** कर्नाटक, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार, आंध्र प्रदेश तथा तेलंगाना में विधानपरिषद हैं तथा अन्य राज्यों में केवल विधानसभा का ही प्रावधान है- जम्मू-कश्मीर को संघ शासित प्रदेश का दर्जा प्राप्त होने के बाद में जम्मु-कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019 के तहत वहाँ विधानपरिषद् को समाप्त कर दिया गया है। विधानपरिषद वाले राज्यों में सदस्यों की संख्या निम्नलिखित है-

राज्य	विधानपरिषद की सदस्य संख्या	राज्य	विधानपरिषद की सदस्य संख्या
उत्तर प्रदेश	100	बिहार	75
तेलंगाना	40	कर्नाटक	75
महाराष्ट्र	78	आंध्र प्रदेश	58

विधानपरिषद की संरचना *(Composition of legislative council)*

- विधानपरिषद के सदस्यों का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। अनुच्छेद 171 के अनुसार विधानपरिषद के कुल सदस्यों की संख्या उस राज्य की विधानसभा के सदस्यों की कुल संख्या के एक तिहाई से अधिक नहीं होनी चाहिये, लेकिन विधानपरिषद के कुल सदस्यों की संख्या किसी भी दशा में 40 से कम नहीं होनी चाहिये। इस प्रकार विधानपरिषद की कुल सदस्य संख्या उस राज्य की विधानसभा की संख्या पर निर्भर करती है।
- विधानपरिषद की संरचना करने का अधिकार संसद को दिया गया है। संसद विधि बनाकर इसकी संरचना कर सकती है। लेकिन तब तक अनुच्छेद 171(3) में उल्लेखित प्रक्रिया के तहत विधानपरिषद के सदस्यों का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रूप से

अध्याय
13

न्यायपालिका (Judiciary)

भारतीय संविधान में अमेरिकी संविधान के विपरीत एकीकृत न्याय व्यवस्था का प्रावधान किया गया है, जिसके शीर्ष स्तर पर सर्वोच्च न्यायालय एवं उसके उपरांत राज्यों में उच्च न्यायालय एवं अधीनस्थ न्यायालयों की व्यवस्था की गई है। अधीनस्थ न्यायालयों में ज़िला न्यायालय एवं इससे नीचे स्तर के न्यायालय शामिल हैं। न्यायालय की एकल व्यवस्था भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत ग्रहण की गई है।

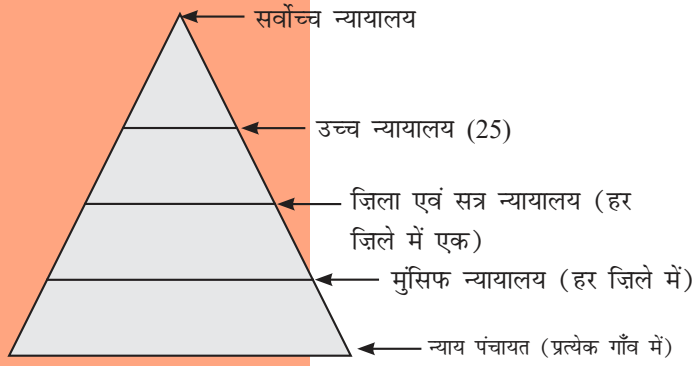

भारत की न्यायिक संरचना

भारत अमेरिका की तरह संघीय देश है परंतु न्यायिक व्यवस्था में भिन्नता है। अमेरिका में न्यायालय की द्वैध व्यवस्था है, जिसमें केंद्र हेतु संघीय कानून है जो संघ-न्याय क्षेत्रों में लागू होता है तथा राज्य हेतु राज्य कानून हैं जो राज्य न्याय क्षेत्रों में लागू होते हैं। जबकि भारत में एकल न्याय व्यवस्था का प्रावधान है, जिसमें केंद्र एवं राज्यों या राज्यों के बीच मामले आदि की अंतिम सुनवाई करने का अधिकार केवल सर्वोच्च न्यायालय को है।

भारत का सर्वोच्च न्यायालय

- यह उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का अन्य न्यायालयों में स्थानांतरण कर सकता है।
- इसके फैसले सभी अदालतों को मानने होते हैं।
- यह किसी अदालत का मुकदमा अपने पास मँगवा सकता है।
- यह किसी एक उच्च न्यायालय में चल रहे मुकदमे को दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर सकता है।

⇩

उच्च न्यायालय

- निचली अदालतों के फैसले पर की गई अपील की सुनवाई कर सकता है।
- मौलिक अधिकारों को बहाल करने के लिये **रिट जारी** कर सकता है।
- राज्यों के क्षेत्राधिकार में आने वाले मुकदमों का निपटारा कर सकता है।
- अधीनस्थ अदालतों का पर्यवेक्षण और नियंत्रण की शक्तियाँ निहित हैं।

⇩

ज़िला न्यायालय (अदालत)

- ज़िले में दायर मुकदमों की सुनवाई करता है।
- निचली अदालतों के फैसले पर की गई अपील की सुनवाई करता है।
- आपराधिक मामलों पर फैसला देता है।

⇩

अधीनस्थ न्यायालय (अदालत)

- फौजदारी (आपराधिक) मुकदमों पर विचार करती है।
- दीवानी (सिविल) मुकदमों पर विचार करती है।

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी, फ्लोचार्ट तथा मानचित्र का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- क्विक रिवीजन हेतु प्रत्येक अध्याय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों का संकलन।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS
YouTube Drishti IAS
drishtiias
drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 8750187501, 011-47532596